THE ECONOMIC TIMES

Date:01-04-24

Think Beyond Mfg For More

ET Editorials

Making growth more employment-inclusive requires a broader approach than just seeking solutions in labour-intensive manufacturing. India's accelerated infrastructure build-up is creating alternative job opportunities that could take some pressure off manufacturing, which needs to be competitive as supply chains diversify beyond China. In any case, employment intensity of manufacturing is declining, and it will need to be buttressed by services, where India has an advantage over its East Asian neighbours. Services also have a bigger impact than manufacturing on reducing job market inequity such as gender, age and social bias. Policy support to increase participation by marginalised groups is needed to address the quality of India's labour market, as ILO has recommended. Focus on healthcare and digital economies should help, it adds.

These suggestions are in line with what India has been attempting, apart from trying to ease rigidities in its labour market. Neither manufacturing nor services can absorb the low-skilled workforce emerging from India's agriculture, and intervention is necessary to equip them with the required skills. The skilling imperative is vital in an environment of economy-wide technological disruption. India may have to tap innovative solutions, such as incentives to small enterprises, for job creation just as it offers export subsidies to large manufacturers. It will also have to devise means to ensure real wages do not stagnate for extended periods.

The Indian solution to unemployment will differ from other developing economies because of its scale and rapidly evolving nature of global production. GoI will have to experiment with a wider set of approaches than building big factories teeming with workers.

दैनिक जागरण

Date:01-04-24

स्वच्छ हवा-पानी सबसे बड़ी चुनौती

अनिल प्रकाश जोशी, (लेखक पर्यावरणविद् हैं)

पिछले दिनों स्विट्जरलैंड की एक संस्था आइक्यूएयर ने विश्व वायु गुणवत्ता रिपोर्ट जारी की। उसके अनुसार बिगड़ती हवा के मामले में भारत 134 देशों की सूची में तीसरे नंबर पर है। पहले और दूसरे स्थान पर बांग्लादेश और पाकिस्तान हैं। भारत के मुकाबले इन दोनों देशों की आर्थिकी कमजोर है। इस कारण वहां वायु प्रदूषण की समस्या होना समझ में आता है, लेकिन दुनिया की पांचवीं बड़ी आर्थिक ताकत बन कर उभरे भारत में हवा की यह दुर्दशा चिंतित करती है। आने वाले

समय में जब देश विकसित होगा, उस स्थिति में यहां हवा की स्थिति की बस कल्पना ही कर सकते हैं। हालांकि विकसित देश बनना चुनौती है, पर अब शुद्ध हवा-पानी उससे भी बड़ी चुनौती बनने जा रहे हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार हवा में पीएम 2.5 सांद्रता पांच माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर होनी चाहिए, लेकिन अपने देश में इसका स्तर 10 गुना ज्यादा यानी 50 के ऊपर पाया गया है। यह आंकड़ा बांग्लादेश में 79 और पाकिस्तान में 73 है। पीएम यानी पार्टिकुलेट मैटर वायु में मौजूद छोटे कण होते हैं। ये वातावरण में मौजूद ठोस कणों और तरल बूंदों का मिश्रण हैं। ये इतने छोटे होते हैं कि नग्न आंखों से भी नहीं देखे जा सकते। सांस के जरिये ये हमारे फेफड़ों और फिर रक्त के जरिये दूसरे अंगों में पहुंच जाते हैं। तमाम गंभीर रोगों का कारण बनते हैं। ऐसे में नए आंकड़े ज्यादा डराने वाले हैं। देश के 96 प्रतिशत लोग इस बुरी हवा की चपेट में हैं। दिल्ली दुनिया में सबसे प्रदूषित राजधानी पाई गई है। यहां पीएम 2.5 का स्तर 102 है। दुनिया में सबसे प्रदूषित शहर भी अपने ही देश में पाया गया है। इसमें बेगूसराय शीर्ष पर है। इस प्रकार दुनिया के सबसे प्रदूषित शहरों में 80 शहर अपने ही देश में हैं। जाहिर है अपने देश में कोई भी शहर अब शुद्ध हवा पानी में नहीं जीता।

इसे देखते हुए अब देश में वायु प्रदूषण की समस्या को नए सिरे से समझना होगा। आखिर वे कौन-सी गतिविधियां हैं, जो तमाम प्रयत्नों के बाद भी हमारी प्राण वायु को संकट में डाल रही हैं। अपने ही प्राणों को हम संकट में डाल रहे हैं। इसको किसी भी तरह हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। अपने देश के 1.36 अरब लोग इसकी चपेट में हैं तो पूरी व्यवस्था पर सवाल खड़ा होना ही चाहिए। हम आने वाले समय में विकसित देश बनने की ओर आगे बढ़ रहे हैं। देश की राजधानी दिल्ली में पीएम 2.5 का स्तर 102 माइक्रोग्राम प्रति घन क्यूबिक मीटर है। इस कारण देश के लोगों खासकर बच्चों और बुजुर्गों में सांस, त्वचा एवं हृदय की बीमारियां पनप रही हैं। ऐसे में यह दायित्व तो सरकार के साथ समाज का भी होना चाहिए।

विकसित बनने के साथ स्वच्छ एवं सुंदर रहना भी हमारा उद्देश्य होना चाहिए। यह उतना ही महत्व रखता है। आज दुनिया भर के आंकड़े एक ही तरफ इशारा करते हैं कि पीएम 2.5 का स्तर आने वाले समय में हम सबके लिए सबसे घातक होने जा रहा है। अब हमें इस विषय पर टुकड़ों-टुकडों में चर्चा करने की प्रवृत्ति छोड़नी होगी। देश में हर वर्ष दीवाली, होली आदि त्योहारों या फिर पराली जलाने के समय हम खूब चर्चा करते हैं। एक-दूसरे के ऊपर जिम्मेदारी डालते रहते हैं। इस क्रम में सरकारों को ही कोसने का काम करते हैं। इसी प्रवृत्ति के कारण हम प्रदूषण के मामले में दुनिया में लगातार टाप कर रहे हैं। दरअसल हम अभी भी प्रदूषण के मूल कारणों से बहुत ज्यादा दूर हैं और यही आज सबसे बड़ा विषय भी है।

आज भी अपने देश में यही मानकर चला जा रहा है कि या तो उद्योग या फिर परिवहन या हमारी बढ़ती सुविधाओं को पूरा करने वाले आवश्यक उपभोक्ता सामान प्रदूषण के बड़े कारण हैं। वास्तव में शहरों में प्रदूषण का एक बड़ा कारण हमारी सड़कों पर बढ़ती धूल और असुरक्षित विनिर्माण हैं जिन पर हमारा ध्यान नहीं जाता। एक आंकड़े के अनुसार देश में उद्योगों से मात्र सात प्रतिशत प्रदूषण होता है। परिवहन से भी यह 10 प्रतिशत से ज्यादा नहीं होता। इस मामले में सबसे बड़ा खतरा सड़कों पर पड़ी धूल से पैदा हो रहा है। इस संबंध में हम विकसित देशों से सीख सकते हैं। कई देशों में सड़कों पर दौड़ती गाड़ियां कभी भी धूल नहीं उठा पातीं, क्योंकि वहां सड़कों के दोनों तरफ घास की पट्टियां धूल को उड़ने नहीं देतीं। वहां की सड़कों को धूल मुक्त रखा जाता है। जबकि अपने देश की सड़कों पर ऐसी कोई व्यवस्था नहीं की गई, जो धूल को उठने न दे। जाहिर है जब उन पर 24 घंटे गाड़ियां दौड़ेंगी तो धूल हवा में होगी ही होगी। यह एक बड़ा विषय है जिस पर हमें बहुत गंभीरता से ध्यान देना होगा। धूल को स्थिर रखने के लिए व्यवस्था की जानी चाहिए।

अमेरिका, चीन या अन्य विकसित देशों में सड़क केंद्रित धूल को प्रदूषण नियंत्रण के तहत टारगेट किया जाता है। हमारे देश में असुरक्षित विनिर्माण से होने वाला प्रदूषण भी एक बड़ा मुद्दा है। इसके अलावा थर्मल पावर प्लांट और हमारी बढ़ती घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने वाले इलेक्ट्रानिक उपकरण भी इसमें बड़ी भूमिका निभा रहे हैं।

साफ है कि अगर हमने आज सही निर्णय नहीं लिया तो आने वाले दिनों में देश में दो बड़ी समस्याएं सबसे विकराल रूप लेने वाली हैं-एक पानी का संकट और दूसरा प्राणवायु का। यह दोनों एक दूसरे से जुड़े भी हुए हैं। बड़ी बात तो यही है कि प्राण बचाने के लिए यही पहली आवश्यकताएं हैं। अब जिस तरह से हालात बिगड़ चुके हैं, वे सही प्रबंधन के अभाव में और भी बदतर होंगे, ऐसे में सोचना होगा कि हम मात्र जहान बचाने की ही चिंता न करें, साथ में अपनी जान बचाने के लिए भी गंभीर हों।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:01-04-24

आखिर न्यायपालिका को कौन धमकी दे रहा है?

शेखर गुप्ता

देश की उच्च न्यायपालिका के इर्दगिर्द पिछले कुछ समय में कई घटनाएं घटी हैं। पहले हरीश साल्वे सहित 'बार' के 600 सदस्यों ने देश के मुख्य न्यायाधीश को एक पत्र लिख कर उच्चतम न्यायालय के साथ ऐसे समय में एकजुटता और समर्थन दर्शाया जब उनके मुताबिक उस पर चौतरफा हमले हो रहे हैं।

इसे 'बार' में आम तौर पर होने वाली राजनीति माना जा सकता है, खासकर यह देखते हुए कि पश्चिम बंगाल समेत कुछ राज्यों में बार काउंसिल के चुनाव भी पार्टियों के चुनाव चिह्न पर लड़े जा रहे हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अधिवक्ताओं के समर्थन और एकजुटता के पत्र को एक दिलचस्प टिप्पणी के साथ साझा किया- 50 वर्ष पहले कांग्रेस ने एक 'प्रतिबद्ध न्यायपालिका' की मांग की थी।

यह बात हमें 1973 और 1977 में ले जाती है जब इंदिरा गांधी की सरकार ने देश के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति करते समय वरिष्ठतम न्यायाधीश की नियुक्ति की मान्य परंपरा का दो बार उल्लंघन किया था। दोनों बार यह निर्णय राजनीति से प्रेरित था। वास्तव में दोनों ही नियुक्तियां उस दशक में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए अहम निर्णयों से जुड़ी थीं।

पहली बार अप्रैल 1973 में तीन वरिष्ठतम न्यायाधीशों जयशंकर मणिलाल शेलत, एएन ग्रोवर और केएस हेगड़े की अनदेखी करके अजित नाथ राय को मुख्य न्यायाधीश चुना गया। जिन तीन न्यायाधीशों की अनदेखी की गयी थी उन्होंने इस्तीफा दे दिया। यह मामला केशवानंद भारती मामले से जुड़ा हुआ था जिसमें 13 न्यायाधीशों के पीठ ने 7-6 से यह निर्णय दिया था कि कुछ ऐसा है जिसे भारतीय संविधान का बुनियादी ढांचा कहा जाता है। राय उन छह न्यायाधीशों में

शामिल थे जिन्होंने कहा था कि ऐसा कोई ढांचा नहीं है। जिन तीन न्यायाधीशों की वरिष्ठता की अनदेखी की गई वे 'बुनियादी ढांचे' के सिद्धांत के हिमायती थे और हम भारतीय उनके ऋणी हैं।

दूसरी बार ऐसा मौका जनवरी 1977 में आया जब कुछ ही समय बाद आपातकाल को हटाया जाने वाला था। इंदिरा गांधी अपने लिए सबसे अधिक असहज स्थिति पैदा करने वाले न्यायाधीश को दंडित करना चाहती थीं। इस बार एच आर खन्ना की वरिष्ठता की अनदेखी करके एम एच बेग को मुख्य न्यायाधीश बनाया गया। खन्ना ने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। 1973 की घटना के बाद उन्हें समझ में आ गया था कि क्या होने वाला है। वह उन सात लोगों में से एक थे जिन्होंने केशवानंद भारती में बहुमत से बुनियादी ढांचे के पक्ष में निर्णय दिया था। इससे भी अहम बात है कि आपातकाल के दौरान बंदी प्रत्यक्षीकरण के मामले जिसे एडीएम जबलपुर मामले के नाम से जाना जाता है, उस मामले में जहां पांच में से चार न्यायाधीशों ने सरकार के नागरिक अधिकारों में कटौती के नजरिये का समर्थन किया था, वहां भी खन्ना इकलौते असहमत न्यायाधीश थे। खन्ना कभी देश के मुख्य न्यायाधीश नहीं बने लेकिन वह देश के न्यायाधीशों में बहुत बड़े कद के न्यायाधीश माने जाते हैं।

इंदिरा गांधी का सत्ता प्रतिष्ठान न्यायाधीशों को अपनी समाजवादी धारा के प्रतिकूल मानता था, जिसे मतदाताओं का समर्थन हासिल था। उनके करीबियों में सोवियत झुकाव वाले वामपंथियों का प्रभाव था। यही वजह है कि भारत को ऐसे न्यायाधीशों की जरूरत थी जो इस बात की बेहतर समझ रखते कि जनता की इच्छा क्या है।

इस लिहाज से उन न्यायाधीशों को निर्वाचित सरकार के लोकप्रिय रुख को लेकर 'प्रतिबद्ध' होना था। इंदिरा गांधी की कैबिनेट में शामिल रहे प्रख्यात वामपंथी मोहन कुमार मंगलम को प्रतिबद्ध न्यायपालिका का विचार सामने रखने का श्रेय दिया जाता है। तानाशाहों की चाह यह होती है कि संस्थाएं उनके हिसाब से 'एकदम दुरुस्त' हों क्योंकि उन्हें लगता है कि केवल वे ही संस्थाओं का निर्माण और उनकी रक्षा कर सकते हैं। इंदिरा गांधी ने न्यायाधीशों की वरिष्ठता की अनदेखी करके न्यायपालिका को भी ऐसी ही संस्था में बदलना चाहा। प्रधानमंत्री मोदी 1973 में शुरू हुए उसी चलन का जिक्र कर रहे थे।

ऐसे में यह सवाल आएगा कि आखिर आज ऐसा कौन है जो न्यायपालिका का दमन करने का प्रयास कर रहा है? यकीनन प्रधानमंत्री ने एक्स (पूर्व में ट्विटर) पर जो कुछ लिखा है उसके मुताबिक ऐसा करने वाली कांग्रेस है। अगर वाकई ऐसा है तो कहा जा सकता है कि लोक सभा में 52 सीट वाली कांग्रेस अपनी क्षमता से कई गुना अधिक ताकत का प्रदर्शन कर रही है।

एक लोकतंत्र में हर प्रकार की कमी से रहित 'संपूर्ण संस्थान' जैसा कुछ नहीं होता। भारतीय न्यायपालिका भी इससे कोसों दूर है लेकिन सवाल यह है कि क्या हाल के दिनों में वह पहले की तुलना में अधिक अपूर्ण स्थिति में है? यह इस बात पर निर्भर करता है कि आपके लिए हाल के दिनों का अर्थ क्या है। यह इससे भी तय होगा कि आपकी राजनीति क्या है।

उदाहरण के लिए अगर आप मोदी विरोधी, भाजपा विरोधी पक्ष के हैं तो आप कह सकते हैं कि सर्वोच्च न्यायालय ने 2010 से 2014 के बीच घोटालों के दौर में अपना रास्ता खो दिया था।

उस दौर में न्यायाधीश तमाम आदेश जारी कर रहे थे जिनमें से कुछ मौखिक हुआ करते थे। वे सभी प्रभावी आरोपियों को दोषी करार दे रहे थे और दूरसंचार क्षेत्र के '2जी जैसे घोटालों' की सीधी निगरानी कर रहे थे। उनकी बातों में गुस्सा जाहिर था।

वर्तमान राजनीति की परवाह नहीं करने वाले और क्रिकेट के प्रति पूर्वग्रह रखने वाले व्यक्ति के रूप में मैं सोच सकता हूं कि सर्वोच्च न्यायालय उस वक्त रास्ते से भटक गया जब उसने भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड का संचालन अपने हाथ में लेते हुए भारतीय क्रिकेट का प्रबंधन करने की ठानी। इससे भारतीय क्रिकेट का कुछ भी भला नहीं हुआ लेकिन सेवानिवृत न्यायाधीशों, अफसरशाहों और सेना के तीन सितारा अधिकारियों को जरूर मालामाल किया।

अगर भाजपा के साथ हैं या आप भाजपा से हैं तो आपके लिए 'हाल के दिनों' का अर्थ क्या होगा? इस पत्र और प्रधानमंत्री के बयान को देखें तो लगेगा कि वह वक्त अभी है। क्या यह बेनामी चुनावी बॉन्ड पर हुए निर्णय की वजह से है? वह उकसावे का एक बिंदु हो सकता है, हालांकि इन बॉन्ड से सामने आने वाली जानकारी एकतरफा नहीं है। हर किसी को इनसे लाभ हुआ और गोपनीयता बनाए रखने में सभी शामिल थे। हालांकि इसने कुछ अहम मुद्दे उभारे। मसलन सरकारी एजेंसियों के छापों और नियामकों के कदमों तथा कंपनियों के भुगतान के समय में क्या संबंध था।

अधिवक्ताओं के पत्र को सावधानी से पढ़कर कुछ बिंदु तय किए जा सकते हैं कि आखिर इसे लिखने की वजह क्या होगी। इसे बचाव की कार्रवाई के रूप में देखा जा सकता है क्योंकि यह तब सामने आया जब चुनाव प्रचार आरंभ ही हुआ है। इसे सत्तातंत्र का जबरदस्त समर्थन मिला। पत्र में न्यायपालिका के बेनामी शत्रुओं का उल्लेख किया गया और कहा गया कि अदालती पीठ को 'फिक्स' किया गया। यह भी आरोप लगाया गया कि दिन में अदालती बहस में और रात को समाचार चैनलों पर बहस के जरिये माहौल बनाने और चुनिंदा न्यायाधीशों और फैसलों की आलोचना का आरोप लगाया गया।

पत्र में एक वाक्य खासतौर पर दिलचस्प और रहस्य से भरा है। वह उन अधिवक्ताओं के बारे में है जो लोगों की राजनीतिक आलोचना करते हैं लेकिन अदालत में उनके बचाव के लिए खड़े होते हैं। ध्यान दीजिए कि इस समय अदालत में सबसे प्रमुख विपक्षी नेता कौन है और उनका अधिवक्ता कौन है? क्या हमने यह भी देखा है कि कुछ राजनीतिक वादियों ने कतिपय पीठ से अपने मामले हटवा लिए ताकि इस बीच उनके प्रतिकूल न्यायाधीश बदल जाएं? इस पत्र में काफी बातें हैं जो हमें गहराई से सोचने पर विवश करती हैं। एक बात बिल्कुल तय है कि इसे सरकार का पूरा समर्थन है।

विचार यह है कि न्यायपालिका खतरे में है और 'बार' तथा कार्यपालिका का यह धड़ा उसे बचाने के लिए एकजुट है। यह सर्वोच्च न्यायालय को तय करना है कि उसे अपने लिए खतरा महसूस हो रहा है अथवा नहीं। यदि ऐसा है तो ये जो भी 'गैर राज्य तत्त्व' हैं क्या उनकी ओर से यह खतरा इतना गंभीर है कि न्यायपालिका को कार्यपालिका की मदद की आवश्यकता पड़े? यदि ऐसा है तो कहा जा सकता है कि यह परिदृश्य 50 वर्ष पहले के उस परिदृश्य से अलग है जब न्यायपालिका इंदिरा गांधी की कार्यपालिका से जूझ रही थी।

जनसत्ता

Date:01-04-24

मुक्त व्यापार समझौतों की नई डगर

जयंतीलाल भंडारी

इस समय जब वैश्विक आर्थिक सुस्ती, इजराइल-फिलिस्तीन युद्ध और रूस-यूक्रेन युद्ध के बीच वैश्विक व्यापार और निर्यात चुनौतीपूर्ण स्थिति में हैं, तब भारत के लिए वैश्विक व्यापार और निर्यात बढ़ाने के लिए मुक्त व्यापार समझौतों (एफटीए) की अहमियत बढ़ गई है। इस परिप्रेक्ष्य में हाल ही में भारत और चार यूरोपीय देशों के समूह 'यूरोपियन फ्री ट्रेड एसोसिएशन' (ईएफटीए) के बीच निवेश और वस्तु तथा सेवाओं के दोतरफा व्यापार को बढ़ावा देने के लिए किया गया मुक्त व्यापार समझौता (एफटीए) अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इसे व्यापार और आर्थिक समझौता (टीईपीए) कहा गया है। इस व्यापार समझौते के बाद पेरू, ओमान, ब्रिटेन और यूरोपीय संघ (ईयू) सहित कई देश भारत के साथ व्यापार समझौते की बातचीत को आगे बढ़ाते दिख रहे हैं।

गौरतलब है कि मुक्त व्यापार समझौता दो या दो से अधिक देशों के बीच एक ऐसी व्यवस्था है, जहां वे साझेदार देशों से व्यापार की जाने वाली वस्तुओं पर सीमा शुल्क खत्म कर देते हैं या कम करने पर सहमत होते हैं। इन संधियों के अंतर्गत दस से तीस विषय शामिल होते हैं। दुनिया में साढ़े तीन सौ से अधिक एफटीए वर्तमान में लागू हैं। इनके बीच हाल ही में भारत का ईएफटीए देशों के साथ हुआ एफटीए दुनिया में रेखांकित हो रहा है। 2022-2023 के दौरान ईएफटीए देशों को भारत का निर्यात 1.92 अरब डालर था। वित्तवर्ष 2022-23 के दौरान इन देशों से भारत का कुल आयात 16.74 अरब डालर था। यानी व्यापार घाटा 14.82 अरब डालर हुआ था। ऐसे में ईएफटीए देशों से किया गया एफटीए भारत के निर्यात बढ़ाने में अहम भूमिका निभाएगा।

भारत और ईएफटीए देश व्यापार और निवेश समझौते पर पंद्रह वर्ष से भी लंबे समय से बातचीत कर रहे थे। करीब तेरह दौर की वार्ता के बाद 2013 के अंत में इस पर बातचीत रुक गई थी। इसके बाद 2016 में फिर से वार्ता शुरू हुई और चार दौर की बातचीत के बाद अब यह समझौता धरातल पर आया है। दरअसल, भारत-ईएफटीए, व्यापार समझौता एक मुक्त, निष्पक्ष और समानता वाले व्यापार की प्रतिबद्धता का प्रतीक है। इसके जरिए भारत और ईएफटीए देश आर्थिक रूप से एक-दूसरे के पूरक बन जाएंगे। गौरतलब है कि ईएफटीए देश यूरोपीय संघ (ईयू) का हिस्सा नहीं हैं। यह मुक्त व्यापार को बढ़ाया देने और तेज करने के लिए एक अंतर-सरकारी संगठन है। इसकी स्थापना उन देशों के लिए एक विकल्प के रूप में की गई थी, जो यूरोपीय समुदाय में शामिल नहीं होना चाहते थे।

उल्लेखनीय है कि नए एफटीए के तहत ईएफटीए ने अगले पंद्रह वर्षों में भारत में सौ अरब डालर के निवेश की प्रतिबद्धता जताई है। यह भारत का ऐसे समूह के साथ पहला व्यापार करार है, जिसमें विकसित देश शामिल हैं।

ईएफटीए के सदस्य देशों में आइसलैंड, स्विट्जरलैंड, नार्वे और लिकटेंस्टाइन शामिल हैं। इस समझौते में वस्तुओं के व्यापार, उत्पत्ति के नियम, शोध और नवाचार, बौद्धिक संपदा अधिकार (आइपीआर), सेवाओं का व्यापार, निवेश प्रोत्साहन और सहयोग, सरकारी खरीद, व्यापार में तकनीकी बाधाएं और व्यापार सुविधा शामिल हैं। इससे भारत में दस लाख प्रत्यक्ष नौकरियां सृजित होंगी। इसमें व्यापार से ज्यादा निवेश पर जोर दिया गया है। इन चार यूरोपीय देशों से होने वाले भारत के कुल व्यापार में स्विट्जरलैंड की हिस्सेदारी नब्बे फीसद से अधिक है तथा बाकी में अन्य तीनों देश शामिल हैं।

इस समझौते से डिजिटल व्यापार, बैंकिंग, वित्तीय सेवा, फार्मा, टेक्सटाइल जैसे क्षेत्रों में इन चार देशों के बाजार में भारत की पहुंच आसान होगी। इसके बदले भारत भी इन देशों की विभिन्न वस्तुओं के लिए अपने आयात शुल्क कम करेगा। यद्यपि कृषि, डेयरी, सोया और कोयला क्षेत्र को इस व्यापार समझौते से दूर रखा गया है। साथ ही प्रोडक्शन लिंक्ड इंसेंटिव (पीएलआइ) योजना से जुड़े क्षेत्रों के लिए भी भारतीय बाजार को नहीं खोला गया है। हरित और पवन ऊर्जा, फार्मा, खाद्य प्रसंस्करण, केमिकल्स के साथ उच्च गुणवत्ता वाली मशीनरी के क्षेत्र में ईएफटीए देश भारत में निवेश करेंगे, जिससे इन क्षेत्रों में हमारा आयात भी कम होगा और भारतीय उत्पादों की गुणवत्ता बढ़ाने में मदद मिलेगी। इससे यूरोप के बड़े बाजार में भारतीय निर्यातकों की पहुंच आसान हो जाएगी। इसी के साथ ईएफटीए देशों को भी भारत के बड़े बाजार तक पहुंच मिली है। भारतीय कंपनियां अपनी आपूर्ति शृंखलाओं को अधिक जुझारू बनाते हुए उनमें विविधता लाने का प्रयास करेंगी। दूसरी तरफ, भारत को ईएफटीए से अधिक विदेशी निवेश मिलेगा और उसे अपनी आर्थिक क्षमता का बेहतर इस्तेमाल करने और रोजगार के अतिरिक्त अवसर पैदा करने में मदद मिलेगी।

गौरतलब है कि 15 नवंबर, 2020 को अस्तित्व में आए दुनिया के सबसे बड़े व्यापार समझौते 'रीजनल कांप्रिहेंसिव इकोनामिक पार्टनरशिप' (आरसेप) में भारत ने अपने आर्थिक और कारोबारी हितों के मद्देनजर शामिल होना उचित नहीं समझा था। फिर एफटीए की डगर पर आगे बढ़ने की नई सोच विकसित की गई। इस समय भारत विदेश व्यापार नीति को नया मोड़ देते हुए दुनिया के प्रमुख देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौते की डगर पर तेजी से आगे बढ़ रहा है। इससे दुनिया में यह संदेश जा रहा है कि भारत के दरवाजे वैश्विक व्यापार और कारोबार के लिए तेजी से खुल रहे हैं।

इस समय जब वैश्विक अर्थव्यवस्था मंदी और विकास दर की चुनौतियों से घिरी हुई है, तब दुनिया में सबसे अधिक विकास दर का तमगा हासिल करके भारत मुक्त व्यापार समझौतों के जरिए आगामी वर्षों में निवेश, निर्यात, रोजगार और विकास की तेज रफ्तार की रणनीति के साथ आगे बढ़ रहा है। ऐसे में दुनिया के कई विकसित और विकासशील देश भारत के साथ मुक्त व्यापार समझौते करने के लिए उत्सुक हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था को आर्थिक पंख लगे हुए दिखाई दे रहे हैं। घरेलू संरचनात्मक सुधार, विनिर्माण, वैश्विक आर्थिक शृंखला, बुनियादी ढांचे में निवेश और हरित ऊर्जा पर निर्भरता बढ़ने से भारत तेजी से आगे बढ़ रहा है। भारत में दुनिया की सबसे बड़ी युवा आबादी, सबसे अधिक कौशल प्रशिक्षण के अभियान, बढ़ता सेवा क्षेत्र, बढ़ते निर्यात और अर्थव्यवस्था के बाहरी झटकों से उबरने की क्षमता नए भारत के निर्माण की बुनियाद बन सकती है। प्रवासी भारतीयों द्वारा लगातार प्रति वर्ष अधिक धन भारत को भेजने के साथ भारत को तकनीकी विकास के लिए मदद बढ़ी है। उम्मीद की जानी चाहिए कि भारत के लिए निर्यात बढ़ाने के मद्देनजर जिस तरह से आस्ट्रेलिया और यूएई के साथ किए गए एफटीए लाभप्रद सिद्ध हो रहे हैं, उसी तरह ईएफटीए देशों के साथ किया गया नया समझौता भी निर्यात और वैश्विक व्यापार बढ़ाने में मील का पत्थर साबित होगा। इससे देश से निर्यात बढ़ेंगे और बड़े पैमाने पर रोजगार के नए अवसर सृजित होंगे। उम्मीद है कि ईएफटीए के बाद अब ओमान, ब्रिटेन,

कनाडा, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका, इजरायल, खाड़ी देश परिषद और यूरोपीय संघ के साथ भी एफटीए को शीघ्रतापूर्वक अंतिम रूप दिया जा सकेगा।

राष्ट्रीय सहारा

Date:01-04-24

परियोजनाओं को लेकर चिंता

संपादकीय

हिमालयी क्षेत्रों में रेलवे, बांध, जल संबंधी परियोजनाओं और चार-लेन की राजमार्ग से जुड़ी सभी ढांचागत विशाल परियोजनाओं पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने की केंद्र सरकार से मांग की गई है। 'पीपुल्स फॉर 'हिमालय' अभियान का संयुक्त रूप से नेतृत्व कर रहे संगठनों ने शनिवार को एक ऑनलाइन संवाददाता सम्मेलन में लोक सभा चुनाव के लिए राजनीतिक दलों के लिए पांच सूत्री एक मांग पत्र पेश किया। इन परियोजनाओं से हिमालय जैसे बनिस्बत कच्चे या कहें कि युवा पहाड़ के पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र को नुकसान से चिंतित संगठनों का कहना है कि इन परियोजनाओं की बहुआयामी समीक्षा किया जाना जरूरी हो गया है। इसलिए कि इनके क्रियान्वयन के क्रम में उद्योगपति पहाड़ की घाटियों और चोटियों का खुला और मनमाफिक दोहन कर रहे हैं, और इस कारण आने वाली आपदाओं का दंश स्थानीय लोगों को सहना पड़ रहा है। कहीं सुरंग बैठ जाती है, तो कहीं शहर का शहर जमींदोज होने की कगार पर है। जलवायु कार्यकताओं में इस बात को लेकर नाराजगी है कि बड़ी परियोजनाओं के जरिए 'विकास' के इन तौर-तरीकों से स्थानीय लोग प्रभावित होते हैं। जरूरी है कि परियोजना शुरू करने से पूर्व उन्हें विश्वास में लिया जाए। जनमत संग्रह और विचार-विमर्श करके ही किसी सर्वमान्य निर्णय पर पहुंचा जाए। कानूनन अनिवार्य हो कि परियोजना शुरू करने से पहले इनके पारिस्थितिकीय नुकसान के आकलन में जनभागीदारी भी होगी। अभी हो यह रहा है कि प्रोजेक्ट से प्रभावितों के पुनर्वास के लिए करदाताओं के धन का इस्तेमाल किया जाता है, और पहाड़ों की चोटियों और घाटियों का शोषण करने वाले उद्यमियों की कोई जवाबदेही नहीं होती। वे लाभ कमाकर निकल चुके होते हैं, और पारिस्थितिकीय व पर्यावरणीय क्षति से स्थानीय आबादी हलकान और परेशान होती है। चरवाहे, भूमिहीन, दलित, जनजातियां और महिलाएं नीतिगत खामियों के चलते दरपेश आपदाओं और जलवायु संकट से सर्वाधिक त्रस्त होती हैं, जबकि उनका आफत को न्योता देने वाले मानव-निर्मित कारकों में योगदान नहीं होता। जलवायु कार्यकर्ताओं ने ब्रह्मपुत्र नदी तथा उसके बेसिन में प्रस्तावित पनबिजली विकास परियोजनाओं के प्रति भी आगाह किया है। जरूरी है कि जनभावना को 'विकास के ज्वर' से ग्रस्त न होने दिया जाए।

Live हिन्दुस्तान.com

Date:01-04-24

जिस राह भारत आर्थिक महाशक्ति बनेगा

आलोक जोशी, (वरिष्ठ पत्रकार)

अमृतकाल के अंत में, यानी 15 अगस्त 2047 तक क्या भारत एक विकसित राष्ट्र हो जाएगा? क्या हम चीन और अमेरिका को पछाड़ने या कम से कम बराबर की टक्कर देने में कामयाब होंगे? भारत सरकार के पूर्व मुख्य आर्थिक सलाहकार कृष्णमूर्ति सुब्रमण्यन का कहना है कि यदि भारत आठ प्रतिशत की आर्थिक विकास दर से बढ़ता रहे, तो सन् 2047 तक 55 ट्रिलियन, यानी 55 लाख करोड़ डॉलर की अर्थव्यवस्था बन चुका होगा। सुब्रमण्यन इस वक्त अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष में एग्जिक्यूटिव डायरेक्टर हैं। उनका कहना है कि इतने वक्त तक इस रफ्तार से तरक्की के लिए और बड़े सुधारों की जरूरत होगी। मगर दूसरी तरफ, रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर और मशहूर अर्थशास्त्री रघुराम राजन का कहना है कि 2047 तक विकसित राष्ट्र बनने की बात करना एकदम बकवास है। दोनों के पास अपने-अपने तर्क हैं, लेकिन यह समझना जरूरी है कि दोनों की बातें एक-दूसरे से इतनी विपरीत क्यों नजर आ रही हैं?

सन् 1947 में जब भारत आजाद हुआ, तब देश की जीडीपी महज 2.70 लाख करोड़ रुपये थी। उस वक्त एक डॉलर की कीमत थी तीन रुपये तीस पैसे। यानी, देश की जीडीपी लगभग 82 हजार करोड़ डॉलर बनती थी। तब से अब तक यह पहुंची है लगभग 3.75 लाख करोड़ डॉलर, यानी 3.75 ट्रिलियन तक। मतलब यह हुआ कि पिछले साढ़े सात दशक में भारत की औसत वृद्धि दर करीब 5.12 प्रतिशत सालाना रही है। इस रफ्तार से भारत की अर्थव्यवस्था इस दौरान लगभग साढ़े चार गुना हो चुकी है। मगर सवाल यह है कि जब भारत अपनी आजादी की शताब्दी मना रहा होगा, तब तक क्या वह एक विकसित देश बन चुका होगा?

तमाम मुश्किलों के बावजूद भारत आज दुनिया की पांचवीं बड़ी अर्थव्यवस्था है और इसमें शायद ही किसी को शक है कि ब्रिटेन के बाद अब यह जल्दी जापान व जर्मनी को भी पीछे छोड़ने की तरफ बढ़ रहा है। इसके साथ ही, वह दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाएगा। मगर क्या इतना काफी होगा? खासकर, यह देखते हुए कि भारत जिन देशों को पछाड़ेगा, उनकी सालाना वृद्धि दर अब मुश्किल से एक से दो फीसदी के बीच रहने का अनुमान है।

तो अब भारत का असली मुकाबला बचा है अमेरिका और चीन से। अमेरिका की अर्थव्यवस्था का आकार अभी लगभग 28 लाख करोड़ डॉलर है। भारत से लगभग साढ़े सात गुना ज्यादा। उधर चीन की अर्थव्यवस्था का आकार करीब 18 लाख करोड़ डॉलर है। यहांं यह याद रखना चाहिए कि जिस वक्त भारत आजाद हुआ, तब भारत और चीन आर्थिक पैमाने पर लगभग बराबरी के पायदान पर खड़े थे। दोनों ही गरीब देश थे और भारी आबादी के बोझ से दबे हुए थे।

1979 तक भारत और चीन की अर्थव्यवस्था करीब-करीब बराबर ही थी। मगर उसके बाद से चीन ने जो छलांग लगाई, वह आधुनिक विश्व इतिहास का सबसे बड़ा रिकॉर्ड है। 1979 से 2007 तक चीन की अर्थव्यवस्था सालाना 9.9 फीसदी की औसत रफ्तार से बढ़ती रही। दुनिया के किसी देश ने ऐसी विकास दर इतने समय तक हासिल नहीं की। यही नहीं, आर्थिक उदारीकरण की शुरुआत से पहले, 1990 में भी भारत की प्रति व्यक्ति आय 367 डॉलर थी, जबकि चीन में 317 डॉलर। सन 2000 तक यही आंकड़ा भारत में 1,357 डॉलर और चीन में 4,450 डॉलर हो चुका था, जबकि 2022 में भारत के 2,388 डॉलर के मुकाबले चीन 12,720 डॉलर की प्रति व्यक्ति आय पर पहुंच चुका था।

फिक्र की बात इसलिए भी है कि चीन ने भारत के मुकाबले तेज छलांग ऐसे दौर में लगाई, जबकि उसकी आबादी भारत से ज्यादा थी। आज भारत दुनिया की सबसे बड़ी आबादी वाला देश बन चुका है। वैसे जब चीन तेज रफ्तार से बढ़ रहा था, तब भारत में क्या हो रहा था? भारत 1990 के दशक में 5.6 प्रतिशत की रफ्तार से, 2000 से 2009 तक 6.5 प्रतिशत और 2010 के दशक में 5.1 प्रतिशत की रफ्तार से बढ़ा। 1980 से 2005 तक भारत की औसत वृद्धि दर 5.8 फीसदी रही। मगर इन्हीं तीन दशकों में चीन ने 11.7 प्रतिशत, 16.5 प्रतिशत और 8.8 प्रतिशत की जबर्दस्त वृद्धि दर हासिल की। यही वजह है कि जब भी आर्थिक विकास की बात होती है, तो भारत को चीन के बरअक्स ही खुद को देखना पड़ता है। यहां दो और बातों पर ध्यान देना जरूरी है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है और चीन में लोकतंत्र का निशान नहीं मिलता। दूसरी बात, 1962, 65 और 71 की जंगों ने भी भारत के आर्थिक विकास के मोर्चे पर बड़े स्पीड ब्रेकर का काम किया।

बहुत समय बाद बीते साल के आखिरी तीन महीनों में भारत की जीडीपी में 8.4 प्रतिशत की बढ़त दर्ज हुई है और इसी की वजह से साल की बढ़त 7.6 फीसदी होने का अनुमान है। इसी को देखकर शायद कृष्णमूर्ति सुब्रमण्यन आशावान हैं, हालांकि, उनका यह भी कहना है कि इसके लिए भारत में पिछले दस साल में जो आर्थिक सुधार हुए हैं, उनकी रफ्तार दिन दूनी, रात चौगुनी के अंदाज में बढ़ानी पड़ेगी। ऐसा कैसे होगा? चीन में तो लोकतंत्र है नहीं, वहां कैसे होता है? भारत में भी एक वरिष्ठ अधिकारी 'टू मच डेमोक्रेसी' यानी 'लोकतंत्र की अति' का जिक्र कर चुके हैं।

मगर रघुराम राजन की चिंता लोकतंत्र नहीं है। उनका कहना है, भारत को दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनाने का सपना गलत नहीं है, लेकिन वहां तक पहुंचने के लिए क्या करना है, यह साफ होना चाहिए। भारत में दुनिया की सबसे बड़ी नौजवान आबादी है, अगर इसे सही रास्ता न मिला, तो मुश्किल हो सकती है। उनका कहना है कि सरकार को प्राथमिक व उच्च शिक्षा में सुधार का काम तेज करना चाहिए, न कि सेमीकंडक्टर जैसे बड़े प्रोजेक्ट पर ध्यान केंद्रित करना। यह विवाद चलता रह सकता है, मगर इसमें शक नहीं है कि आने वाले ढाई-तीन दशकों में भारत का आर्थिक विकास तेज होगा और वह दुनिया की दो बड़ी आर्थिक शक्तियों में से एक होगा। दिग्गज अमेरिकी निवेशक जिम रोजर्स ने 2015 में एलान किया था कि वह भारतीय कंपनियों के अपने शेयर बेच रहे हैं, लेकिन अब उनका कहना है कि दुनिया में जो भी अमीर होना चाहता है, उसे भारत के शेयर बाजार पर ध्यान देना चाहिए।

जिम रोजर्स अकेले नहीं हैं। मगर रघुराम राजन की यह बात याद रखनी चाहिए कि हमें हवाबाजी में उलझ नहीं जाना चाहिए कि भारत आर्थिक महाशक्ति बनने वाला है, बल्कि उन चीजों पर ध्यान देना चाहिए, जो भारत को इस मुकाम तक पहुंचाने के लिए जरूरी हैं।